राजस्थान पत्रिका
संस्थापक
कर्पूर चन्द्र कुलिश

कमियों को दूर करने का लें संकल्प

चौहत्तरवें स्वाधीनता दिवस पर बहुत-बहुत बधाइयां। निश्चित रूप से इन 73 वर्षों में देश ने जो हासिल किया और जो हासिल किया जाना है, दोनों ही कम नहीं हैं। जरूरत इसकी है कि आज पूरा देश इन बातों पर ईमानदारी से खुलकर विचार करे। लोकतांत्रिक शासन प्रणाली आजादी के बाद की हमारी सबसे बड़ी पूंजी है और हमारा सर्वाधिक जोर इसे बनाए रखने पर होना चाहिए। हमसे पहले, हमारे साथ और हमारे बाद आजाद हुए अनेक मुल्कों ने शुरुआत लोकतंत्र से की, लेकिन उसे महफूज नहीं रख पाए। कहीं तानाशाही आ गई, तो कहीं लोकतांत्रिक तानाशाही। यह हमारा सौभाग्य है कि संविधान निर्माताओं ने हमें ऐसा संविधान और राजनीतिक दलों ने ऐसा नेतृत्व दिया, जिनकी बदौलत लोकतंत्र की यह बेल लगातार फल-फू ल रही है।

आजादी से पहले जिस देश में सूई नहीं बनती थी, वहां आज हवाई जहाज बन रहे हैं। हम चन्द्रमा और मंगल पर जा रहे हैं। बड़े-बड़े बांधों से लेकर बड़ी-बड़ी संस्थाएं हमने खूब बनाई हैं। और तो और, यह यश भी हमारे ही खाते में है कि हमने एक नया देश बना दिया। 95 हजार फौजियों के आत्मसमर्पण का हमारा बनाया इतिहास भी शायद ही कोई अपने नाम करा पाए। तमाम उपलब्धियों के बावजूद हमें अपनी कमियों को न केवल स्वीकारना होगा, अपितु उन्हें दूर करने का संकल्प भी लेना होगा।

आज भी देश की पहली आवश्यकता हर व्यक्ति को रोटी-कपड़ा व मकान उपलब्ध कराने की है। इसके बाद बिजली,पानी, सड़क और चिकित्सा सुविधाओं के साथ सबको रोजगार देश में एक बड़े हिस्से की सबसे पहली जरूरतों में है। यह तो मानना ही पड़ेगा कि कोरोना ने हमारी व्यवस्थाओं की पोल खोल कर रख दी। जरूरत इसकी भी है कि हम अपनी सीमाओं की मजबूती से रक्षा करें। जहां तक हमारी राष्ट्रीय प्राथमिकताओं का प्रश्न है, उन पर हमें मिल बैठ कर चिंतन-मनन करना चाहिए। जब तक यह काम ईमानदारी से और जमीनी जरूरतों को देखते हुए नहीं होगा, आगे नहीं बढ़ पाएंगे। यह सच है कि देश के संसाधन सीमित हैं और जरूरतें असीमित। तब कर्ज लेकर घी पीने का काम हमें माफिक नहीं आ सकता। जो भी कार्यक्रम हाथ में लिया जाए, उसे समयबद्ध पूरा करना जरूरी है, तभी देश को लाभ मिल सकता है। अन्यथा, देश की सारी कमाई आज की तरह, वेतन-भत्ते, पेंशन और कर्ज की किश्त एवं ब्याज चुकाने में ही जाती रहेगी। यह स्थिति बनी रही तो देश नई गुलामी की तरफ अग्रसर हो सकता है। हमें मिलकर इस स्थिति से देश को बचाना होगा।

देश में पुलिस सुधार हैं जरूरी क्योंकि...

'पुलिस को नकारात्मक छवि से मिले आजादी'

पुलिस संवैधानिक अंकुशों के बावजूद निरंकुश है। विडंबना है कि पुलिस को कार्य संपादन के समुचित अधिकार व स्वायत्तता नहीं हैं

एन.के. त्रिपाठी
सेवानिवृत्त आइपीएस अफसर, पूर्व डीजी एनसीआरबी

भारतीय पुलिस का कार्य और छवि जनता के बीच में बहुत ख़राब है। वैसे तो जनता सरकार के सभी विभागों से त्रस्त रहती है, लेकिन पुलिस एक ऐसा विभाग है जो जनता के संकट और आपातकाल में उनके संपर्क में आता है। पीड़ित जब शिकायत लेकर थाने जाता है और वहां सुनवाई नहीं होती और यदि उल्टे उसके साथ दुर्व्यवहार किया जाए तो उसकी आत्मा झकझोर उठती है। जनता की शिकायतों पर कार्रवाई न करना, जनता से दुर्व्यवहार, ग्रामीण क्षेत्रों में सामंती प्रवृत्ति, अल्पसंख्यकों के प्रति पूर्वाग्रह, भ्रष्टाचार एवं मारपीट आदि के आरोप पुलिस पर लगते रहते हैं। पुलिस की छवि नकारात्मक बन जाती है। पुलिस स्वयं अपनी कठिनाइयों से भी परेशान है। कार्य की अधिकता व अनिश्चित कार्य का समय। यह उनके व्यवहार को भी प्रभावित करती है। यद्यपि पुलिस के अच्छे कार्य करने के भी अनेक उदाहरण है लेकिन वे उसकी छवि को सुधारने के लिए अपर्याप्त हैं।

आजादी के बाद पुलिस नेताओं के अधीन हो गई। एक विधायक अपने क्षेत्र के थानों को अपनी व्यक्तिगत जागीर समझता है। राजस्थान के हालिया राजनीतिक संकट में राजस्थान और हरियाणा की पुलिस को घरेलू नौकरों की तरह उपयोग किया गया। सुशांत प्रकरण में महाराष्ट्र, बिहार और केंद्र तीनों सरकारें पुलिस और सीबीआई के द्वारा अपनी राजनीति कर रही है। पुलिस संवैधानिक अंकुशों के बावजूद निरंकुश है। फिर भी विडंबना है कि पुलिस को कार्य संपादन के समुचित अधिकार एवं स्वायत्तता नहीं हैं। कई राज्यों ने पुलिस सुधार आयोग बने लेकिन उनकी रिपोर्ट ठंडे बस्तों में है। आपातकाल के बाद मोरारजी देसाई सरकार ने ईमानदारी से प्रयास कर पुलिस आयोग बनाया। आयोग ने पुलिस से राजनीतिक नियंत्रण समाप्ति की सिफारिश की। हर राज्य में राज्य सुरक्षा बोर्ड बनाने का सुझाव दिया। पुलिस के गलत कार्य के लिए तुरंत जिम्मेदारी निश्चित करने की भी व्यवस्था की। इस महत्त्वपूर्ण पुलिस आयोग की आठों रिपोर्टों को कूड़ेदान में फेंक दिया गया। पूर्व पुलिस अधिकारी, प्रकाश सिंह की याचिका पर 2006 में सुप्रीम कोर्ट ने निर्देशित किया कि राज्य सुरक्षा बोर्ड का गठन कर पुलिस प्रमुख का चयन निर्धारित प्रक्रिया से करें और उसका कार्यकाल सुनिश्चित करें। राज्य अपने पुलिस एक्ट बनाए।

सभी राज्य सरकारों ने इस पर केवल दिखावे के लिए पालन किया और पुलिस पर राजनीतिक पकड़ यथावत बनी रही। कानून के प्रमुख रखवाले होने के कारण पुलिस में बहुप्रतीक्षित सुधार लागू किया जाना समय की पुकार है। राज्यों की ओर से पुलिस सुधार के कुछ कदम तत्काल उठाए जा सकते हैं जैसे कानून व्यवस्था व अनुसंधान पृथक हो। सभी बड़े शहरों में पुलिस कमिशनर प्रणाली लागू की जाए। 8 घंटे की शिफ़्ट में ड्यूटी पर लगाया जाना चाहिए। मध्यप्रदेश पुलिस रेगुलेशन में आवश्यक संशोधन का मसौदा तैयार है उसे स्वीकृत किया जा सकता है। वैसे सुप्रीम कोर्ट की भी मंशा है कि पुलिस सुधार के क़दम तत्काल लागू किए जाएं। तात्कालिक क़दम भी सरकार को गंभीरता के साथ लागू करने होंगे। इस स्वतंत्रता दिवस पर ये संकल्प लेना होगा कि पुलिस को नकारात्मक छवि से आजादी मिले।

कोरोनाकाल में बैंकिग सेक्टर और भी अहम हुआ क्योंकि...

फिर गली निकाली, सरकार के लक्ष्य बैंकों पर छोड़े

उम्मीद की जा सकती है कि बैंको द्वारा प्रदत्त ऋण बैड लोन में नहीं बदलेंगे। इसलिए राजस्व भरपाई जैसे उपायों की जरूरत नहीं पड़ेगी।

प्रो.एम.एस.श्रीराम
आइआइएम, बेंगलूरु में सेंटर फॉर पब्लिक पॉलिसी के चेयरपर्सन

कोरोना महामारी के चलते उपजे आर्थिक हालात से निपटने के लिए सरकार ने जिन उपायों की घोषणा की है, उन पर आरबीआई के पूर्व गवर्नर उर्जित पटेल व पूर्व उप गवर्नर विरल आचार्य ने अपनी पुस्तकों में कुछ सवाल उठाए हैं। उन्होंने इस बात पर प्रकाश डाला है कि सरकार द्वारा बैंकिंग क्षेत्र का प्रबंधन किस प्रकार गया है। इसे तीन चरणों में बांटा जा सकता है। वर्ष 1969 और 1980 में जब बैंकों का राष्ट्रीयकरण हुआ तब सरकार की मंशा बैंकिंग तंत्र पर नियंत्रण करने की थी। यह नियंत्रण धीरे-धीरे बैंकों पर स्वामित्व में बदलने लगा और इसका दायरा बैंकिंग व्यवस्था और संचालन स्तर तक बढ़ने लगा। कई सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन बैंकों के माध्यम से हुआ। जैसे बीस सूत्री कार्यक्रम और एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम। बैंक एक प्रकार से सरकार का ही एक अंग बन गए थे, जिनकी ऋण पुस्तिका पर भी सरकारी नियंत्रण हो चला था। रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के वैधानिक तरलता अनुपात (एसएलआर) और नकद आरक्षित अनुपात (सीआरआर) के ब्यौरे से स्पष्ट है कि जनता की बचत सरकार का राजकोषीय घाटा भरने में काम आई। सरकार, आरबीआइ और बैंकों के बीच का भेद मिटाने के लिए इतना काफी है। इस प्रकार यह इन तीनों को त्रिवेणी संगम कहा जा सकता है।

वर्ष 1991 के बाद हालात बदले। इस त्रिवेणी के बीच दो रेखाएं खींच दी गई। बैंकिंग क्षेत्र को व्यापकता मिली। नए प्राइवेट बैंक आए जो तेजी से आगे बढ़े। वर्ष 2003 में फिस्कल रेस्पॉन्सिबिलिटी एंड बजटरी मैनेजमेंट विधेयक (एफआरबीएम) पारित किया गया। इसके साथ ही स्वमौद्रीकरण की प्रक्रिया समाप्त हो गई। अब सरकार और बैंकों के बीच थोड़ा फासला आया। अब बैंकों की जवाबदेही बढ़ गई थी। एफआरबीएम लागू होने के बाद आरबीआई भी सरकार से कुछ अलग हुआ। अब बैंक सरकार का अंग न रह कर ऐसे स्वतंत्र संस्थान बन गए और जरूरत पड़ने पर सरकार उन्हें पूंजी उपलब्ध करवा सकती है। खास बात यह है कि प्राइवेट क्षेत्र के बैंक नियमन के दायरे से बाहर रखे गए।

कोरोना संकट के बाद जारी पैकेज से बैंक 1991 से पहले वाले दौर में लौटते दिख रहे हैं। यानी बैंक बिना एनपीए और पूंजीकरण की परवाह किए नए ऋण जारी कर सकते हैं। यह ठीक वैसा ही है जैसे क्रेडिट लक्ष्य निर्धारण करने के बाद उसे सीधे राजस्व से फंड दिया जाए। फर्क इतना है कि इस बार प्राइवेट बैंक भी सरकार की इस व्यवस्था में शामिल हैं। वर्ष 1991 से पूर्व और आज के समय में एक महत्त्वपूर्ण अंतर यह भी है कि तब माना जाता था कि बैंक सरकार के इशारे पर काम करते हैं तो अब यह स्पष्ट है कि सरकार के लक्ष्य बैंकों पर छोड़ दिए गए हैं। यानी राजस्व निर्भरता की गली एक बार फिर निकाल ली गई है। लगता है पटेल और आचार्य ने बैंकों में राजस्व की बढ़ती भूमिका से होने वाले सम्भावित नुकसानों को लेकर जो आशंका जताई है, वह निर्मूल नहीं है। आजकल सब्सिडी और प्रत्यक्ष भुगतान को भी बैंकों से सीधे जोड़ दिया गया है। इससे वित्तीय क्षेत्र भी प्रभावित होता है। फिलहाल यह उम्मीद की जा सकती है कि बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋण बैड लोन में नहीं बदलेंगे। इसलिए भविष्य में राजस्व भरपाई जैसे उपायों की जरूरत नहीं पड़ेगी।

जरा हटके

क्या आय ही हमारी खुशी का पैमाना है

हीलेन ओलेन
वाशिंगटन पोस्ट में स्तंभकार वित्त और वेलनेस पर लिखती हैं।

कहावत है, पैसा खुशी नहीं खरीद सकता, हममें से बहुत से लोग इस बात को मानते भी हैं। इस बारे में मैंने दो किताबें लिखी हैं। लोग मुझे एक दशक पुराने अध्ययन का हवाला देते हैं, जिसमें पाया गया कि सालाना 75 हजार डॉलर से अधिक की कमाई भी लोगों की मनोदशा पर ज्यादा प्रभाव नहीं डालती।

कुछ लोग रिसर्च की इस बात से सहमत नहीं है कि जिनके पास अधिक धन है, वे जीवन में ज्यादा संतुष्ट रहते हैं। वे उस अध्ययन से भी सहमत नहीं है, जिसमें कहा गया कि जिनके पास 80 लाख डॉलर की धनराशि वाले इससे कम रखने वालों की तुलना में ज्यादा खुश रहते हैं। पिछले माह आया एक और दिलचस्प अध्ययन हमें धन और खुशी के मामले में विचार का एक नया दृष्टिकोण प्रदान करता है। यह काफी संभव है कि असमानता का युग हमारी खुशी के लिए आया है। पिछले महीने एक जर्नल में प्रकाशित इस अध्ययन में शोधकर्ता जीन ट्वेंग और ए. बेल कूपर ने एक सामाजिक सर्वे में खुशी पर सवालों के जवाबों का अध्ययन किया। दशकों से लोगों के सवालों जवाब ढूंढे कि क्या कोई बहुत खुश था।

उन्होंने पाया कि पैसा और प्रतिष्ठा का इस्तेमाल खुशी खरीदने के लिए किया गया। लेकिन यह स्थिर खोज नहीं है। जीवन की आवश्यकताओं में अंतर के लिए कीमतों में कमी आने की बजाय और बढ़ गई। अध्ययनों में सामने आया है कि पैसे से प्रसन्नता की एक वजह यह भी है कि पैसे के उपयोग से हम उन हालातों से निकल सकते हैं, जो हमें अप्रिय लगते हैं। या उन कार्यों को कर सकते हैं, जो हमें खुशी देते हैं। जैसे हाउसकीपिंग या खाना बनाना। ये पैसे बचाने के साथ ही खुशी के स्तर को भी बढ़ा सकता है।

एक बड़ा वर्ग आज भी यही मानता है कि खुशी धन और आय से जुड़ा है। लेकिन इस थ्योरी को नकारने के आधार कई हैं। यदि धन से खुशी आती तो दुनिया में कई धनी लोग कुंठा और हताशा में कभी जीवन नहीं जीते। खुशी, पैसा नहीं संतुष्टि का भाव है। यह पैसा नहीं, हमारे परिश्रम और प्रयासों से आती है।

पांच महीने के बाद दर्शकों के लिए खुला उरुग्वे का मशहूर सोलिस थियेटर

कोरोना संक्रमण के कारण पिछले पांच महीने से बंद पड़ा उरुग्वे के मोंटेवीडियो स्थित मशहूर सोलिस थियेटर अब खुल गया है। गुरुवार को यहां मोंटेवीडियो फिलार्मोनिक बैंड ने प्रस्तुति दी। दर्शकों को प्रवेश के लिए मास्क पहनना जरूरी किया गया था। मशहूर सोलिस थियेटर का निर्माण 1856 में इटली के वास्तुकार कार्लो जुच्ची ने किया था। 1998 में सोलिस थियेटर का पुनर्निमाण किया गया था।

आत्म-दर्शन

व्यक्तिवादी न बनें

जीवन में महत्वाकांक्षी होना, दूसरों से बड़े होने की चाह मानवीय एकता को नष्ट कर देती हैं। यह दूसरों पर शासन करने का तर्क है। वहीं सद्भावना एक दूसरी बात है, यह एक सेवा है। अतः हम ईश्वर से निवेदन करें कि वे हमें अपने भाई-बहनों के प्रति सतर्क रहने की दृष्टि प्रदान करें, विशेषकर उनके प्रति जो दुःख सह रहे हैं। हम दूसरों के प्रति उदासीन और व्यक्तिवादी नहीं रह सकते हैं। ये दो मनोभाव सद्भावना या एकता के विरोधी हैं। एकता हमें दूसरों की ओर देखने का आह्वान करती जो जरूरत, तकलीफ की स्थिति में हैं। हर व्यक्ति को मानव सम्मान प्रदान करना जरूरी है, चाहे वह किसी भी जाति, धर्म और भाषा का क्यों न हो। एकता हमें मानव सम्मान की ओर ले चलती है, जो ईश्वर द्वारा स्थापित की गई है जिसका केन्द्र-बिन्दु मानव है। मानव सम्मान अपरिहार्य है। यह सामाजिक जीवन की धुरी है और जो दूसरे कार्य संचालन सिद्धांतों को निर्धारित करती है। स्वार्थ के कारण हमारी नजरें दूसरों की ओर, दूसरे समुदाय के लोगों की ओर नहीं जाती हैं। यह प्रवृत्ति हमें कुरूप, खराब और स्वर्थी बनाती है। यह हमारी एकता को नष्ट करती है।

पोप फ्रांसिस
ईसाइयों के गुरु

कोरोनाकाल: सरकारी कदम संतोषजनक, आमदनी पर मार

पत्रिका सर्वे

कोरोनाकाल ने सभी वर्गों को प्रभावित किया है। संक्रमण के मामले दिनोदिन बढ़ रहे हैं। पिछले कुछ महीनों के दौरान लोगों की जिंदगी को कोरोनाने प्रभावित किया। पत्रिका ने कोरोना से जुड़े कुछ सवाल लोगों से पूछे...

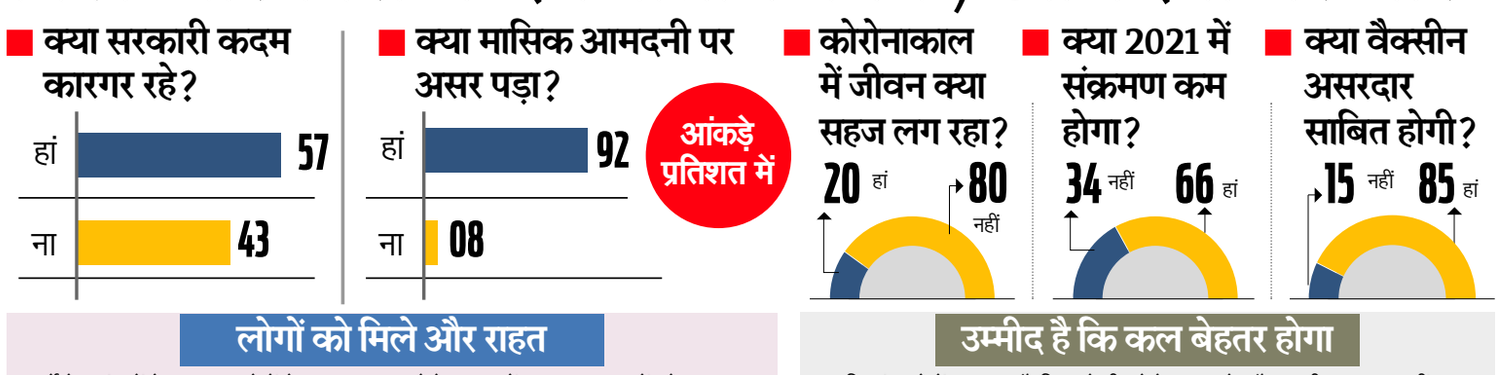

लोगों को मिले और राहत

सर्वे के आंकड़ों के अनुसार लोगों ने सरकार द्वारा कोरोनाकाल में उठाए गए कदमों को संतोषनजक माना है। लेकिन लोगों की मासिक आमदनी पर काफी असर पड़ा है। सरकार को अभी ऐसे और कदम उठाने चाहिए जिससे कि लोगों को और राहत मिल सके।

उम्मीद है कि कल बेहतर होगा

अधिकांश लोगों का माना है कि भले ही कोरोनाकाल के दौरान जीवन सहज नहीं लग रहा है लेकिन उनका मानना है कि अगले वर्ष तक संक्रमण का असर कम होगा। अधिकतर लोगों को ये भी उम्मीद है कि वैक्सीन कोरोना पर असरदार साबित होगी।

विकास पर गर्व

आपकी बात

जब 1947 में भारत आजाद हुआ तो बहुत पिछड़ा हुआ था। पंचवर्षीय योजनाओं के जरिए भारत को एक मजबूत ढांचा प्रदान किया गया। भले ही वह शिक्षा का क्षेत्र हो या स्वास्थ्य का या बड़ी-बड़ी फैक्ट्रियों एवं कारखानों का लगाया जाना हो ,आज हम गर्व से कह सकते हैं कि हमने बहुत विकास किया है।

-अजय सिंह सोलंकी, कोटा

कैसी आजादी , कैसा विकास

हम कैसी आजादी और किस विकास की बात करते हैं। आम आदमी को तो आजादी का मतलब भी नहीं पता। एक तरफ विकास की चकाचौंध, वहीं दूसरी दाल-रोटी के जुगाड़ के लिए सुबह होते ही मजदूर किसी भिखारी की तरह काम तलाश करते नजर आते हैं। अभी हमें कई मामलों में स्वतंत्र होना बाकी है।

-भुवनेश नागर, झालावाड़

आज का सवाल

क्या जनता को आयकर सुधारों का लाभ मिलेगा?

आपकी बात पर अपनी राय भेजने के लिए
98292-66081
व्हाट्सऐप करें

patrika.com पर पढ़ें

पाठकों की प्रतिक्रियाएं

पत्रिकायन का सवाल था, ' आजादी के बाद हुए देश के विकास से क्या आप संतुष्ट हैं?' इस पर कई पाठकों ने मिलीजुली प्रतिक्रियाएं दी हैं। कुछ प्रतिक्रियाएं ऑनलाइन दी जा रही हैं

इसे स्कैन करें

t.ly/eLuI

ट्वीट ऑफ द डे

स्वैच्छिक रक्तदान से पवित्र कोई दूसरा काम नहीं। किसी सिद्ध स्थान की यात्रा करने से ज्यादा पुण्य रक्तदान करने से मिलता है।

डॉ. हर्षवर्द्धन, केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री